जनजातीय चेतना, कला, साहित्य, संस्कृति एवं समाचार का राष्ट्रीय मासिक

ककसाड़

वर्ष 11 अंक 119
फरवरी, 2026
मूल्य : 25/- रुपए

ककसाड़
राष्ट्रीय मासिक पत्रिका

ISSN 2456-2211

दिल्ली से प्रकाशित

ककसाड़

(जनजातीय चेतना, कला, साहित्य, संस्कृति एवं समाचार का राष्ट्रीय मासिक)

फरवरी 2026 **वर्ष-11 • अंक-119**

संस्थापना वर्ष 2015

प्रबंध एवं परामर्श संपादक
कुसुमलता सिंह

संपादक
डॉ. राजाराम त्रिपाठी

कानूनी सलाहकार
फैसल रिजवी, अपूर्वा त्रिपाठी

•

ग्राफिक डिजाईन
रोहित आनंद

• मुख्य कार्यालय एवं रचनाएँ भेजने का पता •

सी-54 रिट्रीट अपार्टमेंट, 20-आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

फोनः 9968288050, 011-22728461

•

• संपादकीय कार्यालय •

151, डी.एन.के. हर्बल इस्टेट, कोण्डागाँव, छ.ग.-494226

फोनः 9425258105, 07786-242506

ई-मेल : kaksaadeditor@gmail.com
kaksaadoffice@gmail.com

वेबसाइट : www.kaksad.com

मूल्य : **रु. 25** (एक प्रति), वार्षिक : **रु. 350/-** संस्था और पुस्तकालयों के लिए वार्षिक : **रु. 500/-** वार्षिक (विदेश) : **$110** यू.एस. आजीवन व्यक्तिगत : **रु. 3000/-** संस्था : **रु. 5000/-**

संपादन-संचालन पूर्णतः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक

दिल्ली से प्रकाशित होने वाली 'ककसाड़' पत्रिका में प्रकाशित लेखकों के विचार उनके अपने हैं जिनसे संपादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

• ककसाड़ से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे • **कुसुमलता सिंह** स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक।

अनुक्रम

दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड (संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार) द्वारा पुरस्कृत

4. **संपादकीय**

साक्षात्कार

6. इन चित्रों को ठहर कर देखें और आत्मसात करें
(चित्रकार **शशि त्रिपाठी** से **कुसुमलता सिंह** की बातचीत)

लेख

8. स्त्री विमर्श का मूल स्वर : **ममता कालिया**
11. सिक्किम की लिंबू जनजाति : **वीरेन्द्र परमार**
14. राहुल सांकृत्यान का भाषा विषयक दृष्टिकोण : **कु. सुषमा**
19. छत्तीसगढ़ राज्य की आदिवासी लोककलाएँ और उनका परिदृश्य : **डुमन लाल ध्रुव**
21. जोहार के संदर्भ में : **शेफालिका सिन्हा**
22. महानदी के घाट पर... : **श्याम नारायण श्रीवास्तव**
28. रघुवीर सहाय का कवि व्यक्तित्व : **शैलेन्द्र चौहान**
34. इक्कीसवीं सदीः राकेश कबीर का कविता संग्रह : **विरेश**

कहानी

30. कामघर : **रमेश कुमार सोनी**
38. कुछ स्मृतियाँ कुछ आवाजें : **कादंबरी मेहरा**

कविताएँ/ग़ज़ल

41. **आशीष मोहन'** 41. **डॉ. प्रेमकुमार पाण्डेय** 42. **चंचल सिंह**
43. **विपिन जैन**

पर्यटन

26. अदुथा निरुथम-वेल्लोर : **कला कौशल**

पुस्तक समीक्षा

50. मैं अयोध्या! : **कुसुमलता सिंह**

लघुकथा

50. अवार्ड : **डॉ. पूरन सिंह**
10. **कहावतें**
33. **यादें**
43. **क्या है ककसाड़?**
44. **साहित्यिक समाचार**

'नया नारी विमर्श' पुस्तक पर परिचर्चा

आवरण कलाकृति - शशि त्रिपाठी

संपादकीय

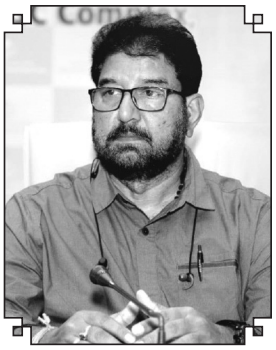

नई साज-सज्जा के साथ फरवरी माह का अंक आपके हाथों में है। जाती ठंड के साथ इस महीने मौसम बहुत तेजी से बदलता है। वैसे इन दिनों देश में मेलों का मौसम है। माघ मास अपने पूरे वैभव के साथ प्रयागराज के तट पर उतरा हुआ है। करोड़ों श्रद्धालु संगम में डुबकी लगाकर पुण्य की तलाश में हैं। ठीक इसी समय ठिठुरती ठंड में देश की राजधानी दिल्ली में विश्व पुस्तक मेला हाल ही में संपन्न हुआ है। इधर छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में भी आलोचनाओं और प्रत्यालोचनाओं के बीच रायपुर साहित्य महोत्सव अंततः अपनी औपचारिक पूर्णता तक पहुँच गया। इन मेलों और आयोजनों के बीच कहीं आस्था बह रही है, कहीं भीड़, कहीं मोबाइल कैमरे और कहीं श्रद्धा के बीच सेल्फी का नया अध्याय लिखा जा रहा है।

धार्मिक मेले हों या साहित्यिक, फर्क बस इतना है कि एक में पतित पावनी गंगा बहती है और दूसरे में ज्ञान की गंगा किताबें। इनमें सामान्यतः जो साझा है वह है भीड़, मंच और उद्घाटन का सिलसिला। दोनों जगह मठाधीशों के पंडाल और स्टॉल सजे मिलेंगे दिलचस्प यह है कि दोनों जगह से लौटकर आए लोग कम से कम कुछ दिनों तक स्वयं को विशिष्ट अनुभव से संपन्न मानते हैं।

पुस्तक मेले और साहित्यिक महोत्सव अब हमारे समय के स्थायी उत्सव बन चुके हैं। अब अनेक साहित्य महोत्सव भी छोटे-मंझोले शहरों में आयोजित हो रहे हैं। जब बात दिखावे की हो तो सरकारी योजनाओं में धन की कमी नहीं होती। मंच सज जाते हैं, बैनर लटक जाते हैं, मनमाफिक अतिथि खोज लिए जाते हैं। साहित्यकारों की उपस्थिति भी सुनिश्चित हो जाती है और जब मेला निशुल्क हो तो भीड़ का कहना ही क्या? उसमें से कितने पढ़ने वाले हैं यह एक अलग विषय है।

पर प्रश्न इन आयोजनों की सफलता या असफलता का नहीं है, प्रश्न है कि इन आयोजनों से साहित्य का वास्तव में कितना भला होता है। ज्यादातर इन आयोजनों की मुख्य प्रायोजक सरकार होती है और इसकी धुरी प्रायः प्रकाशक होते हैं। उनके लिए यह उत्सव कम और बाजार अधिक होता है। स्टॉल सजते हैं, किताबों की ढेरियाँ लगती हैं और उम्मीद की जाती है कि पाठक आएगा, किताब खरीदेगा और प्रकाशन का गणित कुछ संतुलित होगा। इन्हीं मेलों में प्रकाशकों की नेटवर्किंग मजबूत होती है। कौन लेखक बिकाऊ है, कौन पुरस्कार के आसपास है, कौन अगले सत्र का सितारा बन सकता है, इन सबका अनुमान यहीं लगाया जाता है। यहाँ जब बड़े और स्थापित प्रकाशकों की निगाहें केवल नामी चेहरों पर टिकी रहती हैं, तब छोटे और नए प्रकाशक उभरते साहित्यकारों की पांडुलिपियों पर भरोसा कर उन्हें किताब, पाठक और मंच तीनों देने का प्रयास करते हैं। साहित्य के लिए उनका यह योगदान वास्तव में रेखांकित किए जाने योग्य है। इन्हीं आयोजनों में साहित्यकारों की नेटवर्किंग भी खूब होती है। कौन किस अकादमी में है, कौन किस पुरस्कार समिति के निकट है, कौन अगले वर्ष निर्णायक बनने वाला है, यह समस्त गूढ़ ज्ञान इन्हीं गलियारों में अर्जित होता है। कई बार यह नेटवर्किंग रचना से अधिक निर्णायक सिद्ध होती है।

साहित्यकारों के यहाँ पहुँचने के भी कई प्रयोजन होते हैं। नई किताब आई हैं तो भव्य विमोचन चाहिए। मंच चाहिए, माइक चाहिए और पीछे बैनर पर नाम बड़े अक्षरों में चमकता हुआ दिखाई देना चाहिए। प्रकाशक अपने ही स्टॉल पर दस-पंद्रह साहित्यकार जुटा लेता है और किताब का विमोचन 'गरिमामय वातावरण' में संपन्न हो जाता है।

यह भी एक सच है कि इन मेलों में पाठक से अधिक साहित्यकार ही दर्शक, ग्राहक होते हैं। कुछ किताबें वे सचमुच खरीदते हैं। कुछ विमोचन में मुफ्त मिल जाती हैं। कुछ लेखक झोले में अपनी किताबें लेकर प्रचार यात्रा पर निकलते हैं और अवसर तथा सुपात्र मिलते ही एक प्रति थमा देते हैं।

इन आयोजनों में पहुँचने वाले हर महानुभाव के अपने-अपने कारण होते हैं। कोई इसलिए आता है कि "मैं तुम्हारे पुस्तक लोकार्पण में आऊँगा, तुम मेरे में आना।" कोई इसलिए कि प्रकाशक ने कहा है, "आपकी किताब स्टॉल पर है, आप आइए, अपने मित्रों को भी लाइए, बिक्री बढ़ाइए।" साहित्य धीरे-धीरे सहयोगी विपणन व्यवस्था का रूप ले लेता है। कुछ सैलानी होते